आसावरी

आसावरी

'नी र ज'



आत्माराम एण्ड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली - ६

लेखक की अन्य रचनाएं

दद दिया है (पुरस्कृत कविता सग्रह)	४ ५०
दद दिया है (सस्ता सस्करण)	३ ००
प्राण गीत (कविता सग्रह)	३ ००
बादर बरस गयो (कविता सग्रह)	३ ००
दो गीत (कविता सग्रह)	१ ५०
नदी किनारे (कविता सग्रह)	१ ५०
लहर पुकारे (कविता सग्रह)	३ ००
नीरज की पाती (कविता में)	२ ००
मुक्तकी (रुबाइयो का सग्रह)	१ ००
लिख लिख भेजत पाती (पत्रो का सग्रह)	३ ००

आत्माराम एण्ड सस, दिल्ली—६

प्रकाशक
रामलाल पुरी, सचालक
आत्माराम एण्ड सस
काश्मीरी गेट, दिल्ली—६

मूल्य	२ रुपए ५० नए पसे
प्रथम सस्करण	अक्तूबर, १९५८
आवरण	ना मा इगोले
चित्रकार	योगेन्द्रकुमार 'लल्ला'
मुद्रक	हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली

माँ के पूज्य चरणों

में

क्रम

दीप और मनुष्य



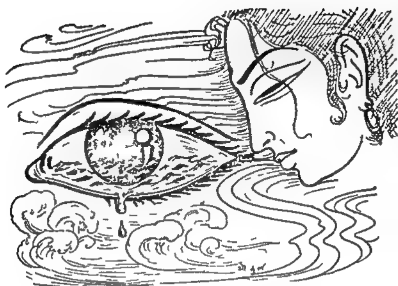
१

एक दिन मैंने कहा यूं दीप से
'तू धरा पर सूर्य का अवतार है,
किसलिये फिर स्नेह बिन मेरे बता
तू न कुछ, बस धूल कण निस्सार है ?'

लौ रही चुप, दीप ही बोला मगर
'बात करना तक तुझे आता नहीं,
सत्य है सिर पर चढा जब दर्प हो
आंख का परदा उघर पाता नहीं।

मूढ ! खिलता फूल यदि निज गंध से
मालियों का नाम फिर चलता कहां ?
मैं स्वयं ही आग से जलता अगर
ज्योति का गौरव तुझे मिलता कहां ?'

हर दर्पन तेरा दर्पन है



२

हर दर्पन तेरा दर्पन है, हर चितवन तेरी चितवन है,
मैं किसी नयन का नीर बनूं, तुझको ही अर्घ्य चढ़ाता हूँ।

नभ की बिंदिया चंदावाली, भू की अँगिया फूलोंवाली,
सावन की ऋतु झूलोंवाली, फागुन की ऋतु भूलोंवाली,
कजरारी पलकें शरमीली, निंदियारी अलकें उरझीली,
गीतोंवाली गोरी ऊषा, सुधियोंवाली संध्या काली,
हर चूनर तेरी चूनर है, हर चादर तेरी चादर है,
मैं कोई घूँघट छुऊँ, तुझे ही बेपरदा कर आता हूँ।
हर दर्पन तेरा दर्पन है॥

यह् कलियो की आनाकानी, यह् अलियो की छीनाछोरी,
यह् बादल की बूंदाबांदी, यह् बिजली की चोराचोरी,
यह् काजल का जादू-टोना, यह् पायल का शादी-गौना,
यह् कोयल की कानाफूसी, यह् मैना की सीनाजोरी,
हर क्रीडा तेरी क्रीडा है, हर पीडा तेरी पीडा है,
मै कोई खेलू खेल, दाँव तेरे ही साथ लगाता हूँ।
हर दपन तेरा दर्पन है ।।

तपसिन कुटियाँ,बैरिन बगियाँ,निघन खडहर, धनवान महल,
शौकीन सडक, गमगीन गली, टेढे-मेढे गढ, गेह् सरल,
रोते दर, हँसती दीवारे, नीची छत, ऊँची मीनारे,
मरघट की बूढी नीरवता, मेलो की क्वाँरी चहल-पहल,
हर देहरी तेरी देहरी है, हर खिडकी तेरी खिडकी है,
मै किसी भवन को नमन करूँ, तुझको ही शीश झुकाता हूँ।
हर दर्पन तेरा दपन है ।।

पानीका स्वर रिमझिम-रिमझिम,माटीका रव रुनझुन-रुनझुन,
बातून जनम की कुनुनमुनन, खामोश मरण की गुपुनचुपुन,
नटखट बचपन की चलाचली, लाचार बढापे की थमथम,
दुख का तीखा-तीखा क्रन्दन, सुख का मीठा-मीठा गुजन
हर वाणी तेरी वाणी है, हर वीणा तेरी वीणा है,
मै कोई छेड़ तान, तुझे ही बस आवाज लगाता हूँ।
हर दपन तेरा दपन है ।।

काले तन या गोरे तन की, मैले मन या उजले मन की,
चाँदी-सोने या चन्दन की, औगुन गुन की या निर्गुन की,
पावन हो या कि अपावन हो, भावन हो या कि अभावन हो,
पूरब की हो या पश्चिम की, उत्तर की हो या दक्खिन की,
हर मूरत तेरी मूरत है, हर सूरत तेरी सूरत है,
मै चाहे जिसकी माग भरूँ, तेरा ही ब्याह रचाता हूँ।
हर दर्पन तेरा दपन है ।।

अधिकार सबका है बराबर



३

फूल पर हँसकर अटक तो, शूल को रोकर झटक मत,
ओ पथिक ! तुझ पर यहाँ अधिकार सबका है बराबर !

बाग है यह हर तरह की वायु का इसमें गमन है,
एक मलयज की वधू तो एक आँधी की बहन है,
यह नहीं मुमकिन कि मधुऋतु देख तू पतझर न देखे,
कीमती कितनी कि चादर हो पड़ी सब पर शिकन है,
दो बरन के सूत की माला प्रकृति है, किन्तु फिर भी—
एक कोना है जहाँ श्रृंगार सबका है बराबर !

फूल पर हँसकर अटक तो, शूल को रोकर झटक मत,
ओ पथिक ! तुझ पर यहाँ अधिकार सबका है बराबर !

कोस मत उस रात को जो पी गई घर का सवेरा,
रूठ मत उस स्वप्न से जो हो सका जग मे न तेरा,
खीज मत उस वक्त पर, दे दोष मत उन बिजलियो को—
जो गिरी तब तब कि जब जब तू चला करने बसेरा,
सृष्टि है शतरज औ' हैं हम सभी मोहरे यहाँ पर
शाह हो पैदल कि शह पर वार सबका है बराबर !

फूल पर हँसकर अटक तो, शूल को रोकर झटक मत,
ओ पथिक ! तुझ पर यहाँ अधिकार सबका है बराबर !

है अदा यह फूल की छूकर उँगलियाँ रूठ जाना,
स्नेह है यह शूल का चुभ उम्र छालो की बढाना,
मुश्किले कहते जिन्हे हम राह की आशीष है वह,
और ठोकर नाम है—बेहोश पग को होश आना,
एक ही केवल नही, है प्यार के रिश्ते हजारो
इसलिये हर अश्रु को उपहार सबका है बराबर !

फल पर हँसकर अटक तो, शूल को रोकर झटक मत,
ओ पथिक ! तुझ पर यहाँ अधिकार सबका है बराबर !

देख मत तू यह कि तेरे कौन दाँयें कौन बाँयें,
तू चलाचल बस कि सब पर प्यार की करता हवायें,
दूसरा कोई नही, विश्राम है दुश्मन डगर पर
इसलिये जो गालियाँ भी दे उसे तू दे दुआयें,
बोल कड़ुवे भी उठाले, गीत मैले भी धुलाले,
क्योकि बगिया के लिये गुंजार सबका है बराबर !

फूल पर हँसकर अटक तो, शूल को रोकर झटक मत,
ओ पथिक ! तुझ पर यहाँ अधिकार सबका है बराबर !

एक बुलबुल का जला कल आशियाना जब चमन में,
फूल मुस्काते रहे, छलका न पानी तक नयन में,
मव मगन अपने भजन मे, था किसी को दुख न कोई,
सिफ कुछ तिनके पडे सिर धुन रहे थे उस हवन में,
हँस पडा मैं देख यह तो एक झरता पात बोला—
'हो मुखर या मूक हाहाकार सबका है बराबर !'

फल पर हँसकर अटक तो, शूल को रोकर झटक मन,
ओ पथिक ! तुझ पर यहा अधिकार सबका है बराबर !

यदि वाणी भी मिल जाये दर्पन को



४

सुन्दरता खुद से ही शरमा जाये
यदि वाणी भी मिल जाये दपण को ।

खुबसूरत है हर फूल मगर उसका
कब मोल चुका पाया है सब मधुवन ?
जब प्रेम समपण देता है अपना
सौन्दर्य तभी करता है निज दर्शन,

अर्पण है सजन और रूपान्तर भी,
पर अन्तर-योग बिना है नश्वर भी,
सच कहता हूँ हर मूरत बोल उठे
दो अश्रु हृदय दे दे यदि पाहन को ।

सुन्दरता खुद से ही शरमा जाये
यदि वाणी भी मिल जाये दपण को ।

सौ वार भरी गगरी आ वादल ने
प्यासी पुतली यह किन्तु रही प्यासी,
साँसो ने जाने कैसा शाप दिया
वन गई देह हर मरघट की दासी,

दुख ही दुख है जग में सव ओर कही,
लेकिन सुख का यह कहना झूठ नही,
'सव की सव सृष्टि खिलौना वन जाये
यदि नजर उमर की लगे न वचपन को!'

सुन्दरता खुद से ही शरमा जाय
यदि वाणी भी मिल जाये दर्पण को!

रुक पाई अपनी हँसी न कलियो से
दुनियाँ ने लूट इसी से ली वगिया,
इस कारण कालिख मुख पर मली गई
वदशक्ल रात पर मरने लगा दिया,

तुम उसे गालियाँ दो, कुछ वात नही
लेकिन शायद तुमको यह ज्ञात नही,
आदमी देवता ही होता जग में
भावुकता अगर न मिलती यौवन को!

सुन्दरता खुद से ही शरमा जाये
यदि वाणी भी मिल जाये दर्पण को!"

है धूल वहुत नाचीज मगर मिटकर
दे गई रूप अनगिन प्रतिमाओ को,
पहरेदारी में किसी घोसले की
तिनके ने रक्खा कैद हवाओ को,

निर्धन दुर्बल हैं, सबका नौकर है
औ' धन हर मठ-मन्दिर का ईश्वर है,
लेकिन मुश्किलें बहुत कम हो जायें
यदि कंचन कहे गरीब न रजकण को।

सुन्दरता खुद से ही शरमा जाये
यदि वाणी भी मिल जाये दर्पण को।

चन्दन की छाँव रहे विषधर लेकिन
मर पाया जहर न उनके बोलो का,
पर पिया पिया का राग पपीहे को
आ सिखला गया वियोग बादलों का,

चाहे सागर को कंगन पहनाओ
चाहे नदियों की चूनर सिलवाओ,
उतरेगा स्वर्ग तभी इस धरती पर
जब प्रेम लिखेगा खत परिवर्तन को।

सुन्दरता खुद से ही शरमा जाये
यदि वाणी भी मिल जाये दर्पण को।



५

ओ प्यासे अधरोंवाली ! इतनी प्यास जगा
बिन जल बरसाये यह घनश्याम न जा पाये !

गरजी बरसी सौ बार घटायें धरती पर
गूंजी मल्हार की तान गली-चौराहों में
लेकिन जब भी तू मिली मुझे आते-जाते
देखी रीती गगरी ही तेरी बाहों में,
सब भरे-पुरे तब प्यासी तू,
हँसमुख जब विश्व, उदासी तू,
ओ गीले नयनोंवाली ! ऐसे आँज नयन
जो नजर मिलाये तेरी मूरत बन जाये !

ओ प्यासे अधरोंवाली ! इतनी प्यास जगा
बिन जल बरसाये यह घनश्याम न जा पाये !

रेशम के झूले डाल रही है झूल धरा
आ आ कर द्वार बुहार रही है पुरवाई,
लेकिन तू धरे कपोल हथेली पर बैठी
है याद कर रही जाने किसकी निठुराई,
जब भरी नदी तू रीत रही,
जी उठी धरा, तू बीत रही,
ओ सोलह सावनवाली ! ऐसे सेज सजा
घर लौट न पाये जा घूँघट से टकराये !

ओ प्यासे अधरोंवाली ! इतनी प्यास जगा
बिन जल बरसाये यह घनश्याम न जा पाये !

पपिहे के कंठ पिया का गीत थिरकता है,
रिमझिम की बंशी बजा रहा घनश्याम झुका,
है मिलन प्रहर नभ-आलिंगन कर रही भूमि
तेरा ही दीप अटारी में क्यों चुका चुका,
तू उन्मन जब गुंजित मधुवन,
तू निर्धन जब बरसे कंचन,
ओ चाँद लजानेवाली ! ऐसे दीप जला
जो आँसू गिरे सितारा बनकर मुस्काये !

ओ प्यासे अधरोंवाली ! इतनी प्यास जगा
बिन जल बरसाये यह घनश्याम न जा पाये !

बादल खुद आता नहीं समुन्दर से चलकर
प्यास ही धरा की उसे बुलाकर लाती है,
जुगनू में चमक नहीं होती, केवल तम को
छूकर उसकी चेतना ज्वाल बन जाती है,

सब खेल यहा पर है धुन का,
जग ताना-बाना है गुन का,
ओ सौ गुनवाली ! ऐसी धुन की गाठ लगा
सब बिखरा जल सागर बन बनकर लहराये !

ओ प्यासे अधरोवाली ! इतनी प्यास जगा
बिन जल बरसाये यह घनश्याम न जा पाये !

कोई मोती गूँथ सुहागिन !



६

कोई मोती गूँथ सुहागिन ! तू अपने गलहार में
मगर विदेसी रूप न बँधनेवाला है सिंगार में !

एक हवा का झोंका जीवन, दो क्षण का मेहमान है,
अरे ठहरना कहाँ, यहाँ गिरवी हर एक मकान है,
व्यथ सुनहरी धूप और यह व्यथ रूपहरी चाँदनी,
हर प्रकाश के साथ किसी अँधियारे की पहचान है,
चमकीली चोली-चुनरी पर मत इतरा यूँ साँवरी !
सबको चादर यहाँ एक सी मिलती चलती बार में !

कोई मोती गूथ सुहागिन ! तू अपने गलहार में
मगर विदेसी रूप न बँधनेवाला है सिंगार में !

ये गुलाब से गाल इन्हें ऋण देना है पतझार का,
चढ़ती हुई उमर पर पानी है मौसमी फुहार का,
अधरों की यह वशी जो चुम्बन के गीत सुना रही
होगी कल खामोश उठेगा डोला जब उस पार का,
दर्पण में मुख देख देख मत अपनी छवि पर रीझ यूं
पड़ती जाती है दरार छिन छिन तन की दीवार में।

कोई मोती गूंथ सुहागिन ! तू अपने गलहार में
मगर विदेसी रूप न बंधनेवाला है सिंगार में।

श्यामल यमुना से केशों में गगा करती वास है,
भोगी अचल की छाया में सिसक रहा सन्यास है,
म्हावर-मेंहदी, काजल-कघी गर्व तुझे जिनपर बड़ा
मुट्ठी भर मिट्टी ही केवल इन सबका इतिहास है,
नटखट लट का नाग जिसे तू भाल बिठाये घूमती
अरी ! एक दिन तुझको ही डस लेगा भरे बजार में।

कोई मोती गूंथ सुहागिन ! तू अपने गलहार मे
मगर विदेसी रूप न बंधनेवाला है सिंगार में।

कल जिस ठौर खड़ी थी दुनियां आज नही उस ठांव है,
जिस आंगन थी धूप सुबह, उस आंगन में अब छांव है,
प्रतिपल नूतन जन्म यहा पर प्रतिपल नूतन मृत्यु है,
देख आंख मलते मलते ही बदल गया सब गांव है,
रूप नदी-तट तू क्या अपना मुखड़ा मल मल धो रही
है न दूसरी बार नहाना सभव बहती धार में।

कोई मोती गूंथ सुहागिन ! तू अपने गलहार में
मगर विदेसी रूप न बंधनेवाला है सिंगार मे।

जब तक डूबे सूय सवेरा ब्याहा जाये शाम से,
तब तक गोरी माथे बिंदिया जड़ले तू आराम से,
मुँदते ही पलकें सूरज की उठते ही दिन की सभा
सबको फुरसत यहाँ मिलेगी अपने अपने काम से,
वहक उठा है चाँद और वह महक उठी है चाँदनी
देख प्यार की रितु न बीत जाय इस भरी बहार में।

कोई मोती गूथ सुहागिन! तू अपने गलहार में
मगर विदेसी रूप न बंधनेवाला है सिंगार में।

विदा क्षण आ पहुँचा



७

जब तक कुछ अपनी कहूँ, सुनूं जग के मन की
तब तक ले डोली द्वार विदा क्षण आ पहुँचा!

फूटे भी तो थे बोल न श्वास कुमारी के
गीतोंवाला इकतारा गिरकर टूट गया,
हो भी न सका था परिचय दृग का दर्पन से
काजल आँसू बनकर छलका औ' छूट गया,

तन भीगा, मन भीगा, कण कण, तृण तृण भीगा,
देहरी-द्वारा, आँगन-उपवन त्रिभुवन भीगा,
जब तक मैं दीप जलाऊँ कुटिया के द्वारे
तब तक बरसात मचाता सावन आ पहुँचा।

जब तक कुछ अपनी कहूँ, सुनूँ जग के मन की
तब तक ले डोली द्वार विदा-क्षण आ पहुँचा।

रह गये धरे के धरे ताख में ज्ञान-ग्रन्थ,
छुट गई बँधी की बँधी रतनवाली गठरी,
लुट गई सजी की सजी रूप की हाट और
देखती खड़ी की खड़ी रही सिगरी नगरी,

कुछ ऐसी लूट मची जीवन चौराहे पर,
खुद को ही खुद लूटने लगा हर सौदागर,
औ' जब तक कोई आये हमको समझाये
तब तक भुगताने ब्याज महाजन आ पहुँचा।

जब तक कुछ अपनी कहूँ, सुनूँ जग के मन की
तब तक ले डोली द्वार विदा-क्षण आ पहुँचा।

आँसू ने दी आवाज तनिक रुक निर्मोही,
सिन्दूर तड़प बोला अब कहाँ मिलन होगा,
अलकों ने कहा जरा यह लट तो सहला जा
क्या ठीक कि सपनों का गौना किस दिन होगा।

सिंगार सिसकता रहा, बिलखता रहा हिया,
दुहराता रहा गगन से चातक 'पिया पिया',
पर जब तक कोई टेर कहीं पहुँचे तब तक
हर कोलाहल का हल सूनापन आ पहुँचा।

जब तक कुछ अपनी कहूँ, सुन जग के मन की
तब तक ले डोली द्वार विदा क्षण आ पहुँचा ।

बाहो ने बाहो को बढकर छूना चाहा,
अधरो ने अधरो से मिलने को शोर किया,
आँखें आँखो में खो जाने को मचल पडी
प्राणो ने प्राणो के हित तन झकझोर दिया,

सबने खीचातानी की, आनाकानी की,
अपनी अपनी कमज़ोरी की अगवानी की,
पर जब तक पहुँचे प्यास तृप्ति के दरवाजे
तब तक प्याले का अमृत गरल बन आ पहुँचा ।

जब तक कुछ अपनी कहूँ, सुनू जग के मन की
तब तक ले डोली द्वार विदा-क्षण आ पहुँचा ।

कल सुबह एक मनिहारिन मेले में बैठी
थी बेच रही चूडियाँ हज़ारो चालो की,
इकरगी-दोरगी, भाँवर की, गौने की
ब्याही अनब्याही सभी कलाईवालो की,

कौतूहलवश मैने भी चाहा, मै अपनी
घरनी के लिये ले चलू चूडी सितवर्णी,
पर जब तक मै कुछ मोल करूँ उससे तब तक
खुद मुझे खोजता कोई कगन आ पहुँचा ।

जब तक कुछ अपनी कहूँ, सुनू जग के मन की
तब तक ले डोली द्वार विदा-क्षण आ पहुँचा ।

वसन्त की रात



८

आज वसंत की रात,
गमन की बात न करना!

धूल बिछाए फूल-बिछौना,
बगिया पहने चांदी-सोना,
कलियाँ फेंके जादू-टोना,
महक उठे सब पात,
हवन की बात न करना!
आज वसन्त की रात,
गमन की बात न करना!

बौराई अबवा की डाली,
गदराई गेंहू की वाली,
सरसो खडी वजाये ताली,
झूम रहे जल-जात,
शयन की वात न करना !
आज वसन्त की रात,
गमन की बात न करना !

खिडकी खोल चन्द्रमा झाँके,
चुनरी खीच सितारे टाके,
मना करूँ तो शोर मचाके,
कोयलिया अनखात,
गहन की बात न करना !
आज वसन्त की रात,
गमन की वात न करना !

निंदिया बैरिन सुधि बिसराई,
सेज निगोडी करे ढिठाई,
ताना मारे सौत जुन्हाई,
रह रह प्राण पिरात,
चुभन की वात न करना !
आज वसन्त की रात,
गमन की वात न करना !

यह पीली चूनर, यह चादर,
यह सुन्दर छवि, यह रस-गागर,
जनम-मरण की यह रज-काँवर,
सब भू की सौगात,
गगन की बात न करना ।

आज वसन्त की रात,
गमन की बात न करना !

प्यार न होगा



९

जग रूठे तो बात न कोई
तुम रूठे तो प्यार न होगा ।

मणियो में तुम ही तो कौस्तुभ
तारो में तुम ही तो चदा,
नदियो में तुम ही तो गगा
गधो में तुम ही निशिगधा,

दीपक में जैसे लौ-बाती
तुम प्राणो के सग-सँगाती,
तन बिछुडे तो बात न कोई
तुम बिछुडे सिंगार न होगा।

जग रूठे तो बात न कोई
तुम रूठे तो प्यार न होगा।

व्याम नही यह, भाल तुम्हारा
धरा नही, हैं धूल चरण की,
सृष्टि नही यह, लीला केवल—
सृजन-प्रलय की, प्रलय-सृजन की,

तन का, मन का, जग-जीवन का,
तुमसे ही नाता इन उन का
हम न रहे तो बात न कोई,
तुम न रहे ससार न होगा।

जग रूठे तो बात न कोई
तुम रूठे तो प्यार न होगा।

पूनम गौर कपोल बिराजे,
अधर हँसे ऊषा ' अरुणीली,
कुन्तल-लट से लिपटी सध्या,
श्यामा अजन-रेख नशीली,

सरि सागर, दिशि दिशि भू-अम्बर
तुमसे ही द्युतिमान चराचर,
रवि न उगे तो बात न कोई
तुम न उगो उजियार न होगा।

जग रूठे ता बात न कोई
तुम रूठे तो प्यार न होगा!

तुम बोले संगीत जी गया,
तुम चुप हुए, हुई चुप वाणी,
तुम विहँसे मधुमास हँस उठा,
तुम रोये रो उठा हिमानी,

जन्म विरह-दिन, मरण मिलन-क्षण,
तुम ही दोनो पर्व चिरन्तन,
दृग न दिखें तो बात न कोई
तुम न दिखे दरबार न होगा!

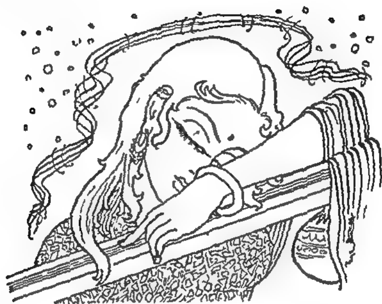
जग रूठे तो बात न कोई
तुम रूठे तो प्यार न होगा!

तुमसे लागी प्रीति, बिना—
भाँवर दुलहिन हो गई सुहागिन,
तुमसे हुआ बिछोह मृत्तिका—
की वन्दिन हो गई अनादिन,

निपट-बिचारी, निपट-दुखारी,
बिना तुम्हारे राजकुमारी,
मुक्ति न मिले न कोई चिन्ता,
तुम न मिले भव पार न होगा!

जग रूठे तो बात न कोई
तुम रूठे तो प्यार न होगा!

दूर नहीं हो



१०

तन से तो सब भांति विलग तुम
लेकिन मन से दूर नही हो।

हाथ न परसे चरण सलोने,
पाँव न जानी गैल तुम्हारी,
दृगन न देखी बाँकी चितवन,
अधर न चूमी लट कजरारी,

चिकने-खुदरे, गोरे-काले,
छलकन औ' बेछलकन वाले,
घट को तो तुम निपट निगुन पर,
पनिहारिन से दूर नही हो।

तन से तो सब भांति विलग तुम

जुड़े न पंडित, सजी न वेदी,
वचन न हुए, न मन्त्र उचारे,
जनम जनम को किन्तु वधू यह
हाथ बिकी बेमोल तुम्हारे,

झूठे-सच्चे, कच्चे-पक्के,
रिश्ते जितने दुनियाँ भर के,
सबसे तो तुम मुक्त, प्रेम—
के वृन्दावन से दूर नहीं हो !

तन से तो सब भाँति विलग तुम
लेकिन मन से दूर नहीं हो !

रचते रचते चित्र उड़े रँग,
शब्द थके लिख लिख परिभाषा,
गढ़ गढ़ मूरत माटी हारी,
खत्म न लेकिन खेल तमाशा,

कब तक और छिपोगे बोले,
अब तो मन्दिर के पट खोले,
भले भजन से दूर मगर तुम
हठी रुदन से दूर नहीं हो !

तन से तो सब भाँति विलग तुम
लेकिन मन से दूर नहीं हो !

पाती तक न पठाई



११

ऐसी सुधि बिसराई
कि पाती तक न पठाई !

बरसा गई मिलन-ऋतु बीती,
घोर घटा घहरी मन-चीती,
पर गागर रीती की रीती,

अधरों बूँद न आई
प्यास से प्यास बुझाई।

ऐसी सुधि बिसराई
कि पाती तक न पठाई !

रोज उड़ाये काग सवेरे,
रोज पुराये चौक घनेरे,
कभी अँधेरे, कभी उजेरे,

पथ-पथ धूल रमाई,
हुई सब लोक हँसाई।

ऐसी सुधि बिसराई
कि पाती तक न पठाई।

बहकी बगियाँ, महकी कलियाँ,
गूँजे आँगन, झूमी गलियाँ,
खुली न मेरी किन्तु किवरियाँ,

साँकल कौन लगाई
कि खोलत उमर सिराई।

ऐसी सुधि बिसराई
कि पाती तक न पठाई।

मन की कुटिया सूनी सूनी
देह बनी चन्दन की धूनी,
बहुत हुई प्रिय! आँख-मिचौनी,

अब तो हो सुनवाई,
सुबह सध्या बन आई।

ऐसी सुधि बिसराई
कि पाती तक न पठाई।

धनियो के तो धन हैं लाखो



१२

धनियो के तो धन हैं लाखो
मुझ निर्धन के धन बस तुम हो।

कोई पहने मणिक-माला,
कोई लाल जड़ावे,
कोई रचे महावर मेंहदी
मुतियन मांग भरावे,

सोने वाले, चादी वाले
पानी वाले, पत्थर वाले
तन के तो लाखो सिंगार हैं
मन के आभूषण बस तुम हो।

धनियो ।

कोई जावे पुरी द्वारिका,
कोई ध्यावे काशी,
कोई तपे त्रिवेणी-सगम
कोई मथुरा-वासी,

उत्तर दक्खिन, पूरब पच्छिम,
भीतर-बाहर, सब जग-जाहर
सन्तो के सौ सौ तीरथ हैं
मेरे वृंदावन बस तुम हो।
धनियो।

कोई करे गुमान रूप पर,
कोई बल पर झूमें,
कोई मारे डीग ज्ञान की,
कोई धन पर घूमे,

काया-माया, जोरू-जाता,
जस-अपजस,सुख-दुख त्रिय तापा
जीता-मरता जग सौ विधि से
मेरे जन्म-मरण बस तुम हो।
धनियो।

स्वप्न झरे फूल से



१३

स्वप्न झरे फूल से,
मीत चुभे शूल से,
लुट गये सिंगार सभी बाग के बबूल से,
और हम खड़े खड़े बहार देखते रहे,
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे !

नींद भी खुली न थी कि हाय धूप ढल गई,
पांव जब तलक उठें कि राह रथ निगल गई,
पात-पात झर गये कि शाख शाख जल गई,
फांस तो निकल सकी न, पर उमर निकल गई,
गीत अश्रु बन चले,
छन्द हो हवन चले,
साथ के सभी दिये धुआँ पहन पहन चले,
और हम झुके झुके,
मोड़ पर रुके रुके,
उम्र के चढ़ाव का उतार देखते रहे,
कारवाँ गुजर गया, गुबार देखते रहे।

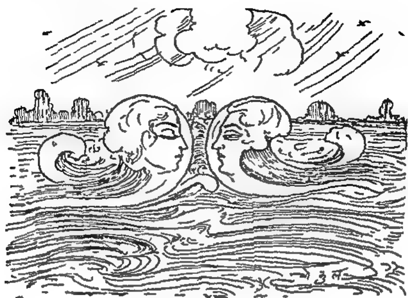
क्या शबाब था कि फूल फूल प्यार कर उठा,
क्या सुरूप था कि देख आइना सिहर उठा,
इस तरफ जमीन और आसमां उधर उठा,
थामकर जिगर उठा कि जो मिला नजर उठा,
एक दिन मगर छली—
वह हवा यहाँ चली,
लुट गई कली कली कि घुट गई गली गली,
और हम दबी नजर,
देह की दुकान पर,
साँस की शराब का खुमार देखते रहे,
कारवाँ गुजर गया, गुबार देखते रहे।

आँख थी मिली मुझे कि अश्रु अश्रु बीन लूँ,
होठ थे खुले कि चूम हर नजर हसीन लूँ,
दर्द था दिया गया कि प्यार से यकीन लूँ,
और गीत यूँ कि रात से चिराग छीन लूँ,
हो सका न कुछ मगर,
शाम बन गई सहर,
वह उठी लहर कि ढह गये किले बिखर बिखर,
और हम लुटे लुटे,
वक्त से पिटे पिटे,
दाम गाँठ के गँवा, बजार देखते रहे,
कारवाँ गुजर गया, गुबार देखते रहे !

माँग भर चली कि एक जब नई नई किरन,
ढोलकें धुनुक उठी, ठुमुक उठे चरण चरण,
शोर मच गया कि लो चली दुल्हन, चली दुल्हन,
गाँव सब उमड़ पड़ा, बहक उठे नयन नयन,
पर तभी जहर भरी,
गाज एक वह गिरी,
पुछ गया सिंदूर तार तार हुए चूनरी
और हम अजान से,
दूर के मकान से,
पालकी लिए हुए कहार देखते रहे,
कारवाँ गुजर गया, गुबार देखते रहे !

एक रोज एक गेह चाँद जब नया उगा,
नौबतें बजी, हुई छटी, डठौन, रतजगा,
कुंडली बनी कि जब मुहूर्त पुन्यमय लगा,
इसलिए कि दे सके न मृत्यु जन्म को दगा,
एक दिन न पर हुआ,
उड़ गया पला सुआ,

कुछ न कर सके शकुन, न काम आ सकी दुआ,
और हम डरे डरे,
नीर नैन में भरे,
ओढ़कर कफ़न पड़े मज़ार देखते रहे,
चाह थी न, किन्तु बार बार देखते रहे,
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।



१४

हम सव खिलौने ह !

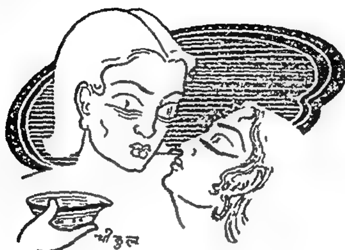
ढाठ काल-वालक के हाथो में
फूलो के बेहिसाब दौने है !
हम सव खिलौने हैं !!

जन्मो के निर्दयी कुम्हार ने
सांसो के चाका पर हमको चढाया है,
तरह तरह माटी ने रूदा है जव
तव यह अनूप रुप हमको मिल पाया है,
सवको हम मनहर हैं,
ऊपर से वहुत वहुत सुन्दर ह,
लेकिन हम भीतर से रिक्त और वौने है !
हम सव खिलौने है !!

हमसे हर मेले की शान है,
हमसे नुमायश हर लगती है,
हमसे हर आगन बहलता है,
हमसे दुनियाँ की हर एक दुकान सजती है,
लेकिन इतने पर भी,
ये सब गुण रखकर भी,
हम मरण-ग्राहक के वास्ते बिछाये निज
बिछौने है।
हम सब खिलौने है।।

स्वत्व है हमारा बस इतना ही
कोई भी हमसे आ खेले,
औ' खेल खेल मे ही हमें तोड दे,
गेह-गाँव-नगर वही अपना है
वक्त का खिलाडी हमे जाके जहाँ छोड दे,
यद्यपि हम धूलि है, बिकते है,
नाशवान होने से घिसते है,
चुकते है
लेकिन हम है तो सब खेल यहाँ बार बार
होने है।
क्योकि हम खिलौने है।।

ओ प्यासे !



१५

हर घट से अपनी प्यास बुझा मत ओ प्यासे !
प्याला बदले तो मधु ही विष बन जाता है !

हैं तरह तरह के फूल धूल की बगिया में
लेकिन सब ही आते पूजा के काम नहीं,
कुछ में शोखी है, कुछ में केवल रूप रंग,
कुछ हँसते सुबह मगर मुस्काते शाम नहीं,

दुनिया है एक नुमायश सीरत-सूरत की,
होती है कीमत मगर नहीं हर सूरत की,
हर सुन्दर शीशे को मन मधु दिखा अपने
सौन्दर्य न अपनाता, केवल भरमाता है।

हर घट से अपनी प्यास बुझा मत ओ प्यासे !
प्याला बदले तो मधु ही विष बन जाता है !

पपिहे पर वज्र गिरे, फिर भी उसने अपनी
पीड़ा को किसी दूसरे जल से नही कहा,
लग गया चाद को दाग, मगर अब तक निशि का
आँगन तज कर वह और न जाकर कही रहा,

हर एक यहाँ है अडिग-अचल अपने प्रण पर
फिर तू ही क्यो भटका फिरता है इधर-उधर,
मत बदल बदल कर राह सफर तय कर अपना
हर पथ मजिल की दूरी नही घटाता है।

हर घट से अपनी प्यास बुझा मत ओ प्यासे !
प्याला बदले तो मधु ही विष बन जाता है !

दीपक ने जलन दिखा डाली सबको अपनी
इस कारण अब तक उसका जलना बन्द नही,
है भटक रहा भँवरा बन वन बस इसीलिये
है एक फूल का चुम्बन उसे पसन्द नही,

है प्यार स्वतत्र, मगर है कही नियन्त्रण भी
ज्यो छन्द कही है मुक्ति, कही है बन्धन भी,
हर देहरी पर मत अपनी भक्ति चढा पागल !
हर मन्दिर का भगवान न पूजा जाता है।

हर घट से अपनी प्यास बुझा मत ओ प्यासे !
प्याला बदले तो मधु ही विष बन जाता है !

जलते जलते फट गया हिया धरती का पर
सावन जब आया अपनी मर्जी से आया,
बादल जब बरसा अपनी मर्जी से बरसा,
नभ ने जब गाया अपनी मर्जी से गाया,

इच्छा का ही चल रहा रहँट हर पनघट पर,
पर सबकी प्यास नही बुझती है इस तट पर,
तू क्यो आवाज लगाता है हर गगरी को?
आनेवाला तो बिना बुलाये आता है।

हर घट से अपनी प्यास बुझा मत ओ प्यासे!
प्याला बदले तो मधु ही विष बन जाता है!

मैं आज सुबह बाजार गया तो बीच सडक
कुछ कपडे बेच रहा था कोई सौदागर,
मनमोहक बरन बरन का जिनका सूत देख,
मेरा भी रीझ गया मन एक दुलाई पर,

ओढा पर उसको तो सब करने लगे व्यग,
पर गाहक एक तभी बोला यह देख ढग—
मन भले विवाह करे हर एक वस्त्र से पर
हर वस्त्र नही हर तन पर शोभा पाता है।

हर घट से अपनी प्यास बुझा मत ओ प्यासे!
प्याला बदले तो मधु ही विष बन जाता है!

स्नेह सदा जलता है



१६

दीप नहीं, स्नेह सदा जलता है।

मिट्टी के शीश साज
सौरभ - आलोक - क्षत्र,
गूँथ हृदय-हार मध्य
किरन-कुसुम-ज्योति-पत्र
वृक्ष नहीं, बीज अरे फलता है।
दीप नहीं, स्नेह सदा जलता है।

जन्म-मरण दो डग धर
नाप सकल भुवन-लोक,
पथ का पाथेय लिये
नयन-द्वय हर्ष शोक,
रूप नहीं, रे अरूप चलता है।
दीप नहीं, स्नेह सदा जलता है।

रेखा की वन्दिनि, गुण-
वर्णों की भ्रमासक्ति
छवि की छाया नटनी
दृग की जड धूल-भक्ति,
आकृति तो कृति की असफलता है।
दीप नहीं, स्नेह सदा जलता है।

बुलबुल और गुलाब



१७

मत छेड़ !
मत छेड़ !
बुलबुल ! सोते गुलाब को मत छेड़ !

धूप से,
गर्मी से,
काँटों से,
हवा के गरम गरम तेज सर्राटों से
दिन भर यह लड़ा है,
झगड़ा है,

और अभी थक कर,
बहुत थक कर,
शायद गश खाकर गिर पडा है।
थकन इसे कुछ तो मिटाने दे,
तुझको आलिंगन में जड सके,
और तेरे होठो पर चुम्बन का ताजमहल गढ सके,
इसकी भुजाओ मे इतनी तो शक्ति आ जाने दे!
मत छेड!
मत छेड!
बुलबुल! सोते गुलाब को मत छेड!

मत छेड!
मत छेड!
बुलबुल! सोते गुलाब को मत छेड!
तेरी शरारत से सोये हुए घावो को ठेस लग सकती है,
नरम नरम पातो म,
ठडी ठडी डालो में आग दहक सकती है,
आवारा चाँद की
हरजाई नीद की आँख बहक सकती ह,
क्योकि प्यार सोये तो शीशा है,
जागे तो जादू है,
दर्द जब तक भीतर है वश मे है,
बाहर बेकाबू है।
ठडे अगारो का गाँव है यह
व्यर्थ चिनगारी न यहाँ डाल,
हवा जो पत्तो के तकियो पर
सोने की कोशिश में करवट बदल रही है,
सुरभ जो पँखुरी की खिडकी से
दबे पाँव चोर जैसी चुप चुप निकल रही है,

उन सबमे उठा न असमय भूचाल !
मत छेड !
मत छेड !
बुलबुल ! सोते गुलाब को मत छेड !

बुलबुल ! यह वह देश नही
जहाँ प्यार बेरोक किया जा सके,
मन भाये फूल को
आत्मा का अर्घ्य बेखौफ दिया जा सके ।
मिट्टी के अश्रु भरे नाटक में
सुख यहा केवल विष्कभक है,
और आनन्द—
अरे वह तो मेहमान है,
भूले-भटके ही कभी आता है,
शाम आये तो सुबह वापिस चला जाता है,
वह केवल रोग है,
शोक है जो पास रह पाता है ।
और यहाँ प्यार—
अरे प्यार नही, सौदा है
उसकी दूकानें है
हाटें-बाज़ारे है
जिनमें वह कपडो के भाव मोल बिकता है,
चाँदी और सोने की उसकी तराजू मे
आदमी से लेकर के ईश्वर तक तुलता है ।
और यहाँ दिल दिल के बीच दीवारें है,
जाति पाँति,
धर्म-कम,
रग-वर्ण,
देश-काल वाली बडी ऊँची मीनारें हैं।

उनको गिराना आसान कोई काम नही
वहाँ लगे बडे बडे पहरे हैं
क्योकि मठ-मस्जिद औ' गिरजाघर
पडित औ' पादरी
शेख और मौलवी
मजहब के जितने भी ठेके-ठेकेदार है,
सबके सब इन्ही के सहारे तो ठहरे हैं ।
इन्हे लाँघ जाने की सजा मौत पाना है
ईसा की भाँति क्रास ऊपर चढ जाना है,
गाँधी की तरह गोली खाकर मर जाना है ।
मरण क्या तुझको स्वीकार है ?
अर्थी उठाने को अपनी तैयार है ?
नही ! नही !
तो मत छेड ! मत छेड !
बुलबुल ! सोते गुलाब को मत छेड !

मत छेड !
मत छेड !
बुलबुल ! सोते गुलाब को मत छेड !
दुखी क्यो होती उदास क्यो होती है ?
प्यार गर प्यार है तो उसका हर आसू एक मोती है,
मोती वह—
माँग जिसे भर कर
जवान यह बूढी सृष्टि होती है ।
तूने जो मोती ढुलकाया
वह व्यर्थ नही जायेगा,
प्यार का मौसम इसी बगिया में आयेगा,
आयेगा नही तो वह—
[illegible]

आज मगर दूसरी ही बात है,
यहाँ की बहुत कुछ तबियत है,
लेकिन वह देख कैसी काली काली रात है।
कल की जो बात आज सुनेगी, डर जायेगी
तेरी यह शानदार कलगी गिर जायेगी,
और फिर अँधेरे के कान भी
बहुत सजग होते हैं
बहुत कुछ तो वे बिना कहे सुन लेते हैं,
इसीलिए चाँदनी का चुम्बन
सितारे बहुत धीरे से लेते हैं।
लेकिन तू चुम्बन नहीं—
जा आज लौट जा
गीतों की शाहजादी!
अपने ही गीतों के गाँवों को लौट जा।
तब यहाँ आना जब
किसी भी बगिया के आस-पास
कोई भी न घेरा हो,
कोई भी न मेढ़ हो,
कोई न दीवार हो,
हर पैदा हँसता हो, जगता हो,
सब पर बहार हो
और हर फूल तुझे—
प्यार करने के लिये—
बिलकुल आजाद हो—
बिलकुल तैयार हो।
आज किन्तु सोये हुए सपनों को
मत छेड़! मत छेड़!
बुलबुल!
जीवन के घायल सिपा[illegible] छेड़!



१८

एक दिन शिशिर की शीत संध्या को
घूमकर आ रहा था वापिस भवन की ओर
नगर की स्वच्छ और पक्की फुटपाथ पर,
इतनी पड़ रही थी ठंड
संसृति की चेतना हुए थी जड़ हिमराशि ।
मानव कृतघ्नता सी तीक्ष्ण प्राण-भेदिनी
हड्डियाँ कपाती
और नस नस चटकाती हुई
चलती थी भयंकर वात ।
शीत का स्वराज्य था,
मृत्यु सी शीतल जड़ छाई थी विचित्र शान्ति

पक्षी भी न नीडो से बाहर तक झाँकते थे
केवल दो चार श्रमिक
कभी कभी दृष्टि आ जाते थे इधर-उधर
पेट में दबाये सर !
सहसा तीव्र वायु-वेग होने लगा,
और गगन भर गया प्रचड काल मेघो से ।
ताण्डव आरभ हुआ
वाणो की वर्षा सी झडी फिर लग गई,
चलती हुई राह वह जहाँ की तहाँ रुक गई
मानो सब हलचल हो चुक गई।
उस पथ के पास एक मन्दिर था।
मन्दिर—जहाँ द्वार पर धर्म का पेहरा है
ज्ञान-भक्ति नित्य जहाँ शीश झुका आते हैं,
और हम सबके भगवान जहाँ—
भक्तो से निशि-दिन प्रसाद भोग पाते ह
लेकिन हमारे कभी काम नही आते हैं,
बहुत यदि सताओ तो पट बन्द करके सो जाते है।
एक क्षण मे ही उसी मन्दिर के आँगन में
भीड बडी जुड गई
और लोग करने लगे कीर्तन भगवान का।
उसी समय—
दूर एक पेड के नीचे से
दुख की साकार कृष्ण छाया सी,
दैन्य दारिद्रय की अनकही कथा सी,
शोपण की प्रथा,
और वाणविद्ध हँसिनी की व्यथा सी,
फटे ग्रथित चिथडो में लिपटी हुए,
ज्वर के असह्य ताप भार से

काँपती-कराहती—
गिरती सँभलती हुई
अधनग्न युवती एक चली आ रही थी इधर।
जगह् जगह् ककड औ' पत्थर की चोटो से
घायल था उसका तन,
और था चू रहा अजस्र रक्त
रोते हुए घावो से ।
एक था बालक नग्न—
छिपा अस्थि-अक मे
उसके मातृत्व का सजीव स्वप्न
गाँधी जवाहर या कि कोई भविष्य का ।
बालक था इतना हतसज्ञ हुआ शीत से
कि—
रोदन का शब्द भी न मुख से निकलता था ।
देख समवेत जन-पुंज वहाँ मन्दिर मे
दूने साहस से वह बढने लगी क्षीणकाय—
बढता है जैसे कोई खोया हुआ पथिक एक—
पास ही देख निज मजिल को ।
चढकर पर ज्योही वह सीढियो के पास गई
एक तिलकधारी यू पुजारी ने कहा चीख—
"राँड भ्रष्ट करने चली अकलुष भगवान को ।"
रह गई ठिठककर वह वही हाय,
मानो हो देखा भयकर सर्प सामने ।
किन्तु मातृ-उर की सजीव ममता सी वह
गिडगिडा कर बोली सकेत कर बालक को—
"दया करो इस पर देव ।"
पर न द्रवित हो सका उसका पाषाण हृदय
होता भी कैसे भला—

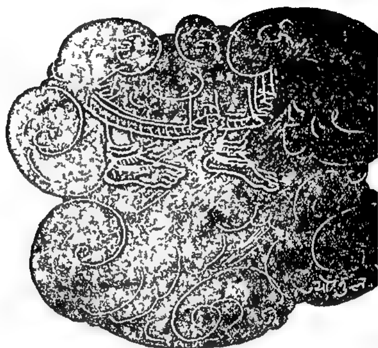
आखिर को था तो पत्थर का पुजारी वह
क्रोध कर बोला यू—
"भाग जा यहाँ से नही लात अभी खायेगी !"
इसके ही पूर्व किन्तु युवती थी गिर पडी
उसके जड चरणो पर
और धो रही थी मल उनका जल धारा से
या कि धो रही थी वह समाज का सजीव कोढ।
लाल कर आँखे विकराल नर-हिंसक सा बोला वह—
"भ्रष्टे-पापिष्ठे ! भ्रष्ट कर दिया तूने मुझे।"
और दूसरे ही क्षण
युवती थी पडी हुई हाय ! तले सीढियो के—
एक पग ठोकर से—
मन्दिर से दूर—
उसके घर से भी दूर—
जहा रहा करता है अशरण-शरण दाता वह !
लेकिन फिर शिशु को—
निश्चेष्ट और मौन देख
किसी आशका का चिन्तन कर
सिहर उठी,
काँप उठी,
जी उठी,
मर उठी,
तिर उठी नील नयन सागर मे
और निज प्राण का भी ध्यान छोड बोली यू—
"पूज्य जहा बैठे है कितने ही श्वान वह—
मेरे प्रवेश से अपावन हो जायेगा ?
जरा तो दया करो इस अबोध शिशु पर।"
किन्तु वह पुजारी फुकार कर गरजा यूँ—

"अपने यारो की सम्पत्ति लिए गोद मे
फिरती है भ्रष्ट ! दया-दया चिल्लाती हुई
अपने सतीत्व को टके सेर
गली-गली विक्रय करने वाली !
कुत्तो से ज्यादा अपवित्र है तेरी छाह ।"
अब न सुन सकी वह और
रह-रह काना मे उसके ये गूजते थे शब्द—
"अपने सतीत्व को टके सेर
गली गली विक्रय करने वाली !
कुत्तो से ज्यादा अपवित्र है तेरी छाह ।"

दूसरे रोज !
उसी पेड की छाँह में पडी थी वह क्षणिकाय
मरी हुई
और स्तनो से वह लिपटा था शिशु ऐसे—
जैसे मन माया से—
किन्तु चेतना विहीन !

जहाँ नही मानव मानव समान
कैसा वह तेरा दरबार है ?
व्यथ ही चमक रहा फैले घने तम में
व्यथ ही रूप धरे धूत भगवान का
खड खड होजा ओ मन्दिर के स्वर्ण-कलश
खड खड होजा ओ पाषाण प्रतिमे आज !

सिक्का



१६

मै चचल पथी चाँदी के पथ का !

जननी मेरी पूजी—वासवदत्ता,
व्यभिचारी शोषण मेरा रसिक पिता,
म रोटी का पति, बिन जिसके जग में
टुकडो पर बिकने लगती मानवता,
जन्मा मै जिस दिन चोर-बजारो में
था जुआ हुआ साहित्य-सस्कृति का।

मै चचल पथी चादी के पथ का !

म रक्त, स्वेद, श्रम पी-पीकर पलना,
पग जग के मस्तक पर धर म चलता,
सोता नारी के नग्न उरोजो पर
जगता सतीत्व मे चुटकी से मलता,
युग की द्रौपदी नग्न कर दी मैंने
म अर्थ दुशासन पे कामी कुत का।

मैं चचल पथी चाँदी के पथ का !

मने राजा को रक बना डाला,
मैंने फकीर को ताज पिन्हा डाला,
रवि उगा दिया पूरब का पश्चिम में
शिर पर धरती आकाश उठा डाला,
बाँटा मानव को आनो-पैसो में
मै वाहक युग की पूजी के रथ का।

मै चचल पथी चाँदी के पथ का !

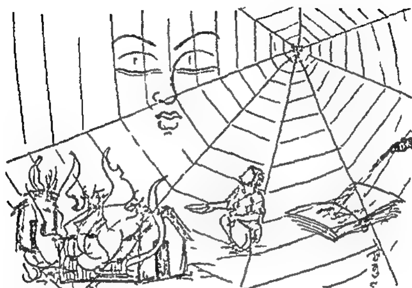
मुझको जिसने पाया सब कुछ पाया,
त्यागा जिसने सब कुछ निज विनसाया,
बदली मैंने रेखायें मस्तक की
विधि का विधि बनकर मै जग मे आया,
मै जन्म-मरण से परे ब्रह्म जिसके
कर में गति-सूत्र सृष्टि के इति-अथ का।

मै चचल पथी चाँदी के पथ का !

दुनियाँ प्यासी मेरे आलिंगन की,
ठोकर भी कली सिखा देती मन की,
सह लेता मेरी मार तनिक भी जो
नस ही उभरी झुक जाती गर्दन की,
कैसा भी हो जड़-बुद्धि मुझे पाकर
पा लेता है सब ज्ञान असत मत का।

मैं चंचल पथी चाँदी के पथ का!

४ १ ४६



२०

हम सब अमरीकन खिलौने हैं!
        वैसे हम देखने में आदमी हैं,
        शक्ल भी हमारी बहुत सुन्दर है,
        खंजन से लोचन हैं,
        पूनो सा श्वेत गौर वर्ण है,
        लेकिन हम भीतर से गन्दे और घिनौने हैं।
हम सब अमरीकन खिलौने हैं!

        हम व्यक्तिवादी नहीं,
        एक है हमारी भी पंक्ति यहाँ
        और उस पंक्ति में
        योद्धा हैं, संत हैं,
        कवि हैं, गुणवन्त हैं,

वडे वडे नाम के मह्त्त है ।
लेकिन बेकार है हमारा यह गौरव सब
क्योकि हम विकते है
हाट हो, मेला हो,
घर हो, बाजार हो,
पव हो, नुमायश हो
हमें जहाँ दाम निज पाने की आशा ह
वही हम—
बाँसो-अरगनियो पर,
सडको दूकानो पर—
सजे हुए दिखते है ।
छोटा-वडा जो भी हो
सबसे ही मोल-भाव करते है ।
हम सब खिलौने ह,
दूसरो के हाथो में लालच के दौने है ।
हम सब अमरीकन खिलौने है ।

गति से हमे नफरत है,
भाग-दौड करना हमारी नही फितरत है ।
जीवित है किन्तु हम चलते नही,
आकृति रखकर भी किसी साचे में ढलते नही,
सुवहो को वुझते नही,
रातो को जलते नही,
क्योकि हम स्थिति में स्थित है,
न हम विवादी है,
न हम सवादी है,
सिफ खडे रहने के आदी है ।
भार हम कोई उठा सकते नही

इसलिए किसी के कुछ काम आ सकते नहीं।
वृद्ध युवक सब को हम व्यर्थ है,
नही किसी अर्थ हैं।
लेकिन कुछ बच्चे हैं,
नासमझ उम्र के जो कच्चे है,
उनकी नजरों मे हम चाँदी और सोने है,
जादू और टौने हैं
क्योकि हम अमरीकन खिलौने हैं!

चूंकि हम प्रगति से अपरिचित है
इसलिये हमारी कोई दृष्टि नही,
दिशा नही, ध्येय नही, मंजिल नही।
हवा जिधर ले जाये उधर उड जाते है,
सब जगह मेला लगाते है,
गाहक की मर्जी पर शक्ल बदल आते है।
इतने दिन इसी तरह हमने बिताये हैं,
चाबी से चले किन्तु पैसे कमाये है।
लेकिन अब लगता हमारा खेल खत्म है,
दुनिया मे हलचल है,
और हवा गर्म है।
रोक सकते है नही
हम इस परिवर्तन को
टोक सकते हैं नही
हम इस नव सर्जन को
क्योकि सब जागे हैं
नीद के परिन्दे दूर भागे है,
लेकिन हम अब भी नकाब कई पहने है।
क्योकि हम आखिर खिलौने है!

पर यह नकाब जब उतरने ही वाला है,
पन्नी का स्वाग सब उघरने ही वाला है,
क्योंकि एक रत्ती भी हममें न बल है
हाथ-पाँव ही न सिर्फ
सीना भी निबल है,
और उधर हर एक कर मे
कुदाली है, हल है।
इसीलिए हम सब खामोश ह,
घर की अँधेरी कोठरियो में
ताखो अलमारियो में—
गम से बेहोश हैं
लेकिन हम शेप है,
और शेप रहेगे कि जब तक—
हर घर मे कुछ कनस, कुछ कोने है।
हम सब अमरीकन खिलौने ह ।



२१

मिल गया जनम का तो उपहार मरण से भी
पर तेरे घर मेरी सुनवाई हुई नहीं !

उस दिन मेले में ढीठ उमर की गुडिया यह
जाने तुझमें क्या बात देखकर मचल गई,
है खडी हुई तब से अब तक यह उसी जगह
जब बस्ती की बस्ती गठरी ले निकल गई,

बदला जग, बदला जीवन, बदले सिंहासन,
बदले आकाश-धरा, बदले फागुन सावन
पर जाने तू किस कगन में कस गया मुझे
अब तक मेरी आजाद कलाई हुई नहीं।

मिल गया जनम का तो उपहार मरण से भी

धरती तो थी जड़ धूल मगर उसके दुख से
ऐसा रोया आकाश कि दुनियाँ नहा गई,
अपने दुश्मन पतझार के गम से घायल हो
बिखरा बसन्त यूँ दिशा दिशा महमहा गई,

जीवन है महाकाव्य दुख जिसका आमुख है,
फिर भी हर दुख का मीत यहाँ कोई सुख है,
बस म ही एक कि जिसके जलते आँगन की
हमदर्द यहाँ कोई पुरवाई हुई नही।

मिल गया जनम का तो उपहार मरण से भी
पर तेरे घर मेरी सुनवाई हुई नही!!

दुहराया तेरा नाम कभी सागर तीरे
बादल बन कभी पुकारा रेगिस्तानो में,
बन खेल-खिलौना खोजा भीड़-तमाशे में
आवाज लगाई पहन कफन शमशानो मे,

खो गया मुसाफिर स्वय नापते हुए डगर,
थक गये साँस के पाँव, खत्म हो गया सफर
लेकिन अब तक इस पीडा के कारागृह से
मेरे तन-मन की तनिक रिहाई हुई नही।

मिल गया जनम का तो उपहार मरण से भी
पर तेरे घर मेरी सुनवाई हुई नही!!

जाने तू किस खिडकी से खडा झाँकता हो
यह सोच झुकाया शिर हर मन्दिर के द्वारे,
जाने तू कब आकर घर साँकल खटकाये
जीवन भर सोया नही इसी गम के मारे,

हर दम ही आँखे रही भरी उघरी-उघरी
तिल तिल घुल छीजी देह, हुई रीती गगरी
लेकिन ओ मेरे चाँद ! बिना तेरे जग मे
मेरे जीवन की रात जुन्हाई हुई नही।

मिल गया जनम का तो उपहार मरण से भी
पर तेरे घर मेरी सुनवाई हुई नही !!

कल रो रो एक दिया कहता था सध्या से
'सारा जीवन तो बीत गया जलते-जलते
पर कोई नही मिला जिसके स्नेहाचल मे
कुछ जलन मिटा लेता अपनी चलते चलते'।

सध्या तो कुछ कह सकी न बस रह गई खडी
यह कहकर पर चमकी तारो की एक लडी—
'रोता है क्यो रे ! धनियो की इस बस्ती में
निधन आँसू की कभी मगाई हुई नही'।

मिल गया जनम का उपहार मरण से भी
पर तेरे घर मेरी सुनवाई हुई नही !!



२२

तुमको तो मेरी याद न आयेगी,
आयेगी भी तो नही रुलायेगी,
पर कभी रुला ही दे तो यह करना—
सामने किसी दर्पन के बैठ जरा—

पहले मुस्काना फिर शरमा जाना।

वैसे तो प्रिय! तुम इतनी सुंदर हो
रोओगी भी तू फूल खिलाओगी,
बादल को अलकों में भरमाओगी,
सावन को पलकों में बरसाओगी,

तरसाना भरमाना पर ठीक नहीं,
बिजलियाँ कौंध उठती हैं कभी कहीं,
माने ही किन्तु न मन तो यह करना—
उगते चन्दा से आँखें उलझाकर—

आँचल खिसकाना, फिर अलसा जाना।

चन्दा से आँख मिलाना बुरा ना नहीं
हर तारे से पर प्यार न अच्छा है,
जूड़े की शोभा एक फूल से है,
उपवन भर से अभिसार न अच्छा है,

इसलिये कि जो सबसे टकराता है,
वह नहीं किसी का भी हो पाता है,
पर फिर भी बस न चले तो यह करना—
जा किसी दुखी पतझर के दरवाजे—

कुछ आँसू ले आना, कुछ दे आना।

सुन्दरी! रूप चाहे जिसका भी हो
यौवन के घर पर एक भिखारी है,
तुम चाहे जितना गर्व करो उस पर
रुकने वाली उसकी न सवारी है,

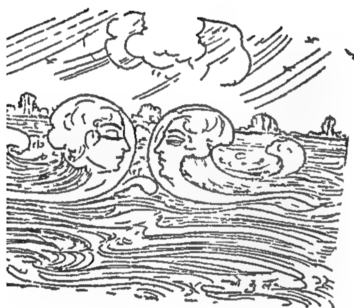
जो अपना नहीं गरब उस पर कैसा?
जीवन तो है कागज के घर जैसा
फिर भी यदि मान करो तो यह करना—
कोई मुरझाया फूल मसल करके—

पहले कुछ सुख पाना, फिर पछताना।

तुम चहल-पहल ब्याहुली अटारी की,
मैं सूनापन विधवा के आँगन का,
है प्यार मिला तुमको मधुमासो का,
मुझ पर साया है रोते सावन का,

मिलना तो अब अपना नामुमकिन है
कारण—ढलने को जीवन का दिन है,
पर फिर भी मिल जायें तो यह करना—
अपने सपनो के मरघट में बैठा—

मैं सिसकूँ तो तुम कफन उढा जाना।



२३

फूल डाली से गुंथा ही झर गया,
घूम आई गध पर ससार मे ।

था गगन में चाद लेकिन चांदनी
व्योम से लाई उसे भू पर उतार,
बांस की जड बांसुरी को एक स्वर
कर गया गुंजित जगत के आर पार,
और मिट्टी के दिये को एक लौ
दे गई चिर ज्योति चिर अँधियार मे ।

वद्ध सीमा में समुंदर था मगर
मेघ बन उसने छुआ जा आसमान,
तृप्ति बंदी एक जल-कण में रही
तिप-अमृत का दे गई पर प्यास दान,
बूंद जो लिपटा हुआ था धूल से
संग लहर के तैर आया धार में।
घूम आई गंध पर संसार में।

व्यक्ति है सीमित, मगर व्यक्तित्व का—
चिर असीमित, चिर अबाधित है प्रसार,
देवता तो सिर्फ मठ की वस्तु है,
किन्तु है देवत्व संसृति का शृंगार,
है नहीं संसार में सीमित प्रणय
किन्तु है संसार सीमित प्यार में।
फूल डाली से गुंथा ही झर गया,
घूम आई गंध पर संसार में।

ुम तब आना



२४

तम ! तुम तब आना—

तद्रित पलको की घनी छाह में, तुम्हारे प्रतीक्षा पथ पर अह-
ा, अकपित जलते हुए, दिवा निशा की अभिसार बेला में, जब मेरे
ो के नीलम प्रदीप में अश्रु-स्नेह की अतिम बूद, रूप-ज्योति की
म किरण, धूप-गध की अतिम सुगन्धि श्वास शेष रह जाये और
लिया पथराने लगें, तब सूर्य का उज्ज्वल मुकुट मस्तक पर लगाये,
का गुलाबी हास अधरो पर बिखेरे, सद्य प्रस्फुटित प्रसून अलको
थे, काकली का कलराग कठ मे भरे, तुम एक बार, केवल एक
, क्षण भर के लिए आकर मुझे अपनी बाँकी झाँकी दिखा जाना,
से कि खुलती कली की पहली शर्म से मैं तुम्हारा स्वागत कर
, शबनम के रुपहले मोतियो का हार तुम्हे पहनाकर, तुम्हारा
ार कर सकू, सहर की नाजुक नसीम से तुम्हे गुदगुदा सकू और

किन्तु हाँ मेरे देव ! इसके पूर्व यदि तुम आये तो मुझे दुख होग, असीम वेदना होगी, शम से मै मर मर जाऊँगी, सभवत अपने नेत्रो का अलोक-दीप अपने हाथो से ही बुझा दूँ, और स्वागत तो दूर तब म तुम्हारी ओर दृष्टिपात भी न कर सकूगी, इसलिए नही कि तब मेरी साधना अधूरी ही रह जायगी, इसलिए भी नही कि तब म स्वय को तुम्हारे चरणो पर सम्पूर्णत समर्पित न कर सकूगी और न इसलिए ही कि तब मुझे तुम्हारी आवश्यकता ही न होगी—हाय ! ऐसा सोचना भी न मेरे प्रभु !

तुम्हारी आवश्यकता, तुम्हारा अभाव और तुम्हारी मधुर सुस्मृति तो मै उठते-बैठते, जागते सोते अहर्निशि अपने रोम-रोम से अनुभव करती हूँ ! फिर क्यो ? केवल इसलिए कि जिन नैनो से मै तुम्हे एक बार देख लूगी, फिर उनसे ही ससार की और कोई वस्तु मुझसे न देखी जायेगी।

अस्तु आराध्य ! तुम तब आना जब मेरे नयनो के नीलम प्रदीप मे अश्रु स्नेह की अ तिम बूद, रूप ज्योति की अन्तिम किरण, धूप गध की अन्तिम सुगधि-श्वास शेष रह जाये और पुतलिया पथराने लगें ! — तुम तब आना।

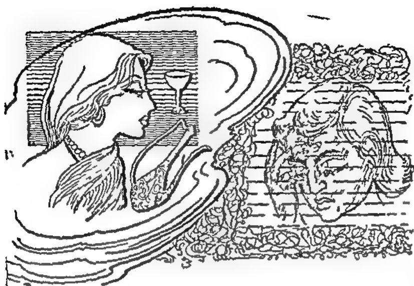


२५

मनुष्य ने जब अमर बनने की कल्पना की वह दौड़ा दौड़ा समुद्र के पास गया और बोला, "ओ तरगवसनवेपी ! आज मैं तुम्हारा मन्थन करूँगा, तुम्हारी थाह लूगा और तुम्हारे अन्तर से अमृत निकालकर अमरत्व प्राप्त करूँगा।" समुद्र ने एक उत्तुङ्ग तरग उछालकर कहा, "—समुद्र मन्थन तो बहुत पहले हो चुका है और अमृत उसकी तो एक बूद भी देवताओ ने नही छोड़ी—अब मेरे अन्तर मे अमृत कहाँ, किन्तु हाँ यदि तू मेरी थाह लेने के लिये मेरी अगम गहराइयो मे डूबना चाहता है, तो जा किसी दुखी के आँसू में डूब कर देख—तुझे मेरी थाह भी मिल जायेगी और अमरता भी।"

मनुष्य के हृदय में पूजा की भावना जब उमडी उसने आकाश की ओर हाथ उठाकर कहा, "हे सच्चिदानन्द, निर्गुण, निराकार ! आज मेरे हाथ किसी की आरती उतारने को आकुल हैं, लोचनो की सीपियो मे अर्घ्य का जल छलका पड रहा है, मन मे पूजा की भावना उमड रही है, अस्तु मैं तुम्हे साकार कर तुम्हारी पूजा करूँगा।" आकाश से कोई बोला, "सत्य है अमृत पुत्र ! तुझमे कुछ ऐसी ही शक्ति है कि तू निराकार को भी साकार कर सकता है, निर्गुण को भी सगुण कर सकता है, पत्थर को भी देवता बना सकता है, पर यह सब व्यर्थ है ससार मे जा और मनुष्य को मनुष्य बनाकर उसकी पूजा कर, मैं स्वय ही साकार हो जाऊँगा—मनुष्य की पूजा मेरी ही पूजा है।"

मनुष्य में जब अहम् जागा, वह स्वर्ग पहुँचा और सुरराज से बोला—"देवराज ! आज मेरे हृदय मे शासन करने की इच्छा उठी है, पृथ्वी का राज्य तो मैं कर चुका अब स्वर्ग पर शासन करना चाहता हूँ इसलिये स्वर्ग का मुकुट मुझे दो मैं उसे अपने मस्तक पर धारण करूँगा।" इन्द्र ने किंचित मुस्कराकर कहा—"स्वर्ग तो केवल कल्पना-लोक है, लेकिन शासन करना यदि तू चाहता है—तो जा जनपद की धूल मस्तक पर धारण कर तुझे त्रिलोक का राज्य प्राप्त हो जायेगा।"



२६

हँसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुखके दिन भी।

मधु का स्वाद लिया है तो विष का भी स्वाद बताना होगा,
खेला है फूलो से तो शूलो को भी अपनाना होगा,
कलियो के रेशमी कपोलो को तूने चूमा है तो फिर
अङ्गारो को भी अधरो पर धर कर रे! मुस्काना होगा,
जीवन का पथ ही कुछ ऐसा जिस पर धूप छाँह सँग रहती
सुख के मधुर क्षणो के सँग ही बढता है चिर दुख का क्षण भी।
हँसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुखके दिन भी।

(२)

गहन कुहू की अँधियारी में कब तारो की छवि मुरझाई?
काँटो के कटु अञ्चल में कब कलि की सुदरता अकुलाई?
बन्द हुई कब पपीहे की 'पी' वज्र विजलियो के पतझड में,
सरिता की चल चञ्चलता कब सागर के सम्मुख शरमाई?

तू फिर क्यों खो बैठा साहस देख घिरा सिर पर दुख-बादल
और भुला बैठा क्यों तुझमें शेष अभी जीवन, यौवन भी।
हँसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुख के दिन भी।

(३)

शूलों का अस्तित्व जहाँ है फूल वहीं तो मुस्काता है,
जहाँ अँधेरे की सत्ता है, जुगनू वहीं चमक पाता है,
जीवन पूर्ण नहीं है पाकर केवल कुछ सुख के ही मृदु क्षण
सुख भी तो सुख कहलाता तब जीवन में जब दुख आता है,
इससे जो कुछ है सम्मुख वरदान समझ उसको मेरे मन !
और देख फिर खोजेगा सुख तेरे दुख की छाँह-शरण ही।
सुख के दिन सपने थे केवल सत्य मनुज ये दुख के दिन ही।

(४)

सुख के दिवस दिये थे जिसने देन उसी की ये दुख के दिन,
जिस घट से छलकी थी मदिरा, शेष उसी घट के ये विषकण
यह अचरज की बात न कोई सीधा सादा खेल प्रकृति का
मधु ऋतु से विनय पतझर का सदा किया करता है मधुवन
यह क्रम निश्चित इसे न कोई बदल सका है, बदल सकेगा,
इससे ही तो कहता हूँ है व्यर्थ अश्रु औ' व्यर्थ रुदन भी।
हँसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुखके दिन भी।

(५)

मुस्काता ही रहा सदा तो मुश्किल भी हल हो जायेगी,
रुके अश्रु सी थकी जिन्दगी, तूफानों की गति पायेगी,
पथ की ऊँचाई, नीचाई जिसे देख कर डरता है मन
क्षण भर में तेरे पग से, रौंद रौंद कर समतल हो जायेगी,
दुख के सम्मुख मुस्काने से दुख ही सुख लगने लगता है,
बन जाता विश्वास विजय का थका पड़ा मुरदा सा मन भी।
हँसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुख के दिन भी।

(६)

हँस कर या रोकर तय कर, तय करना है तुझको ही यह मग,
तुझ पर हँसने का अवसर वह ताक रहा है छिप छिप कर जग,
लक्ष्य-प्राप्ति से पूर्व कहीं जो रुका याद रख, जग के सँग सँग
तुझ पर खूब हँसेंगे तुझको प्यार सदा करने वाले दृग,
और पथ पर चलते चलते ही यदि पथ की धूल बना तो
तेरी खाक देख शरमायेगा युग-मस्तक का चन्दन भी
हँसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुख के दिन भी।

(७)

साँझ सूर्य की साध्य-किरन जो तम की चादर में खो जाती,
वही प्रात ऊषा बन कर फिर तम के घूँघट से मुस्काती
तम से दूर ज्योति जीवन की ज्योतिहीन है, तम सी ही है,
क्योंकि बुझी सी ही जलती है दिन में दीपक की मृदु बाती,
माना यह प्रकाश जीवन में भरता है युग-दिन की हलचल,
किन्तु थके मन को देता विश्राम निशा का सूनापन ही।
सुख के दिन सपने थे केवल सत्य मनुज ये दुख के दिन ही।

(८)

सुख में थी आसान जिंदगी इससे उसकी याद सताती,
दुख में कठिन बना है जीवन इसीलिये पीड़ा अकुलाती,
किन्तु याद रख, एक समय है जब अभाव खलता है दुख का,
और खोजने पर भी पीड़ा छाँह न तब दुख की छू पाती,
जीवन का वह निर्मम क्षण यदि आज नहीं तो कल आयेगा,
सँभल मनुज ओ! तुझे छल रहा प्रति पल तेरा मन दुश्मन ही।
सुख के दिन सपने थे केवल सत्य मनुज ये दुख के दिन ही।

(९)

सुख का ऋण तो चुका दिया है तूने लेकर ये दुख के क्षण,
किन्तु शेष है अभी चुकाना सबसे अधिक कठिन दुख का ऋण,

कुछ ले देकर नही, किन्तु यह दुख का ऋण चुकता है ऐसे—
अधरो पर मुस्कान सजी हो नयनो से झरते हो जल-कण,
जो हँसकर मुस्काकर दुख का यह ऋण कठिन चुका लेता है,
हार मान लेते ह उससे सुख-दुख जीवन और मरण भी।
हसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुखके दिन भी।

(१०)

कल नभ पर छाई थी ऐसी सघन घनो की काली चादर,
ऐसा लगता था न कभी फिर मुस्का पायेगा शशि सुन्दर,
किन्तु आज ही उस तम का है नाम निशां तक शेष न जग मे,
जडा खडा तारक-मणियो से जगमग-जगमग करता अम्बर,
अचरज का मेला है यह जग कभी अँधेरा कभी उजेरा,
मधु मे यहाँ छिपा रहता है काल-हलाहल का क्रन्दन भी,
हँसकर दिन काटे सुखके, हँस खेल काट फिर दुखके दिन भी।

(११)

टूटे वे सपने ही जब लग्न जिन्हे अमरता थी शरमाई,
सूखा वह मधु ही जब जिसके सम्मुख अमर तृषा सकुचाई,
छूट गये वे साथी ही जिनके नयनो की स्नेह-छाँह मे—
रोती सी जिन्दगी फूल की मुस्कानें भर कर मुस्काई,
दे न सके सब साथ पथ पर वे अमरत्व-शिला के पुतले,
फिर रे! कब तक घिरा रहेगा जीवन के नभपर, दुख घन भी।
रहे न जब सुखके ही दिन तो कट जायेंगे दुखके दिन भी।

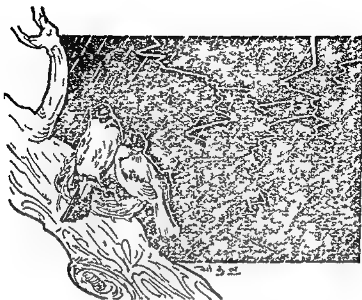
८-६-१६४७

नई सभ्यता



२७

सासो मे जहरीली गैसे, स्वर में माइक्रफोन,
आँखो पर कैमरा, कान पर पहने टेलीफोन,
दुवली पतली गर्दन में गोली गोलो के हार,
पँख लगे बाहो में चटपट उडने को तैयार,
चितवन में विजली, चलने में टैको का रव-घोप,
बातचीत म उबला पडता युद्धो का आक्रोश,



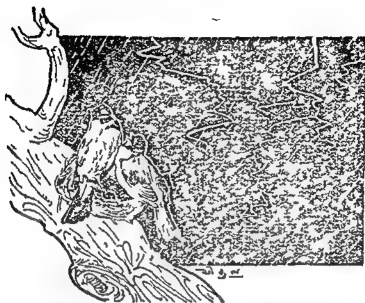
२८

भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना।

साथ देखा था कभी जो एक तारा,
आज भी अपनी डगर का वह सहारा,
आज भी हैं देखते हम तुम उसे पर
हैं हमारे बीच गहरी अश्रु-धारा,
नाव चिर जजर नहीं पतवार कर में,
किस तरह फिर हो तुम्हारे पास आना।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना।।

सोच लेना पथ भूला एक राही,
लख तुम्हारे हाथ में मधु की सुराही,
एक मधु की बूँद पाने के लिए बस,
रुक गया था भूल जीवन की दिशा ही,

अधरो पर है रक्त-लिपिस्टिक की लोहित मुस्कान,
छिपा सजरी गा कगाइयो में सारा विज्ञान,
एक हाथ मे मौत, दूसरे मे लिटरेचर डम्ब
बाँधे हुए कचुकी मे हाइड्रोजन-एटम बम्ब,
छिपा लौह-वस्त्रो में डालर-सा कागजी शरीर,
आसपास चल रही मशीनो, अखबारो की भीड,
घृणा और बारूद बाटती हँसती-मुस्काती है,
करो वैलकम नई सभ्यता की देवी आती है।



२८

भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना।

साथ देखा था कभी जो एक तारा,
आज भी अपनी डगर का वह सहारा,
आज भी हैं देखते हम तुम उसे पर
है हमारे बीच गहरी अश्रु-धारा,
नाव चिर जर्जर नहीं पतवार कर में,
किस तरह फिर हो तुम्हारे पास आना।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना॥

सोच लेना पथ भूला एक राही,
लख तुम्हारे हाथ में मधु की सुराही,
एक मधु की बूंद पाने के लिए बस,
रुक गया था भूल जीवन की दिशा ही,

आज फिर पथ ने पुकारा जा रहा वह,
कौन जाने अब कहाँ पर हो ठिकाना।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना॥

चाहता है कौन अपना स्वप्न टूटे?
चाहता है कौन पथ का साथ छूटे?
रूप की अठखेलियाँ किसको न भातीं,
चाहता है कौन मन का मीत रूठे?
छूटता है साथ, सपने टूटते पर
क्योंकि दुश्मन प्रेमियों का है जमाना।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना॥

यदि कभी फिर हम मिले, जीवन-डगर पर,
मैं लिए आँसू लिए तुम हास मनहर,
बोलना चाहो नहीं, तो बोलना मत,
देख लेना किन्तु मेरी ओर क्षण भर,
✓क्योंकि मेरी राह की मंजिल तुम्हीं हो,
और जीने का तुम्हीं तो हो बहाना।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना॥

साँझ जब दीपक जलायेगी गगन में,
रात जब सपने सजायेगी नयन में,
पी कहा जब जब पुकारेगा पपीहा,
मुस्करायेगी कली जब जब चमन में,
मैं तुम्हारी याद कर रोता रहूँगा,
किन्तु मेरी याद कर तुम मुस्कराना।
भूल' पाओ तो मुझे तुम भूल जाना॥

रोज ही नभ में घिरेंगे प्यार के घन,
रोज फूलेंगे फलेंगे रूप के वन,

रोज कलियो के उठा घूघट शराबी,
गुनगुनायेगा मदिर मधुमास गुन गुन,
फूल कलियाँ वे वही सब कुछ रहेगा,
पर न गायेगी कभी बुलबुल तराना।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना।।

भूल जाना किस तरह सँग सँग तुम्हारे,
छाँह बनकर मैं रहा सध्या - सकारे,
सोचना मत किस तरह मैं जी रहा हूँ,
चल रहा हूँ किस तरह सुधि के सहारे,
किन्तु इतनी, भीख तुमसे माँगता हूँ,
यदि पढो यह गीत इसको गुनगुनाना।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना।।

१०-८-१९४६